Think IAS...

दृष्टि The Vision

Think Drishti

झारखंड लोक सेवा आयोग (JPSC)

गद्य खंड

(आलोचना एवं व्याख्या)

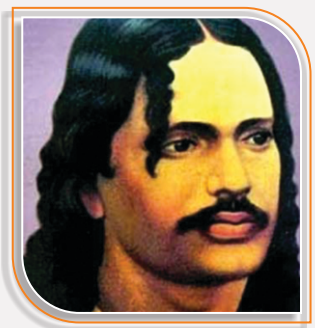

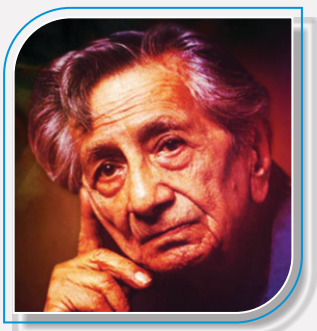

दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रम (Distance Learning Programme)

Code: JHM04

झारखंड लोक सेवा आयोग (JPSC)

गद्य खंड

(आलोचना एवं व्याख्या)

641, प्रथम तल, डॉ. मुखर्जी नगर, दिल्ली-110009
दूरभाष : 8750187501, 011-47532596
टोल फ्री : 1800-121-6260
Web : www.drishtiIAS.com
E-mail : online@groupdrishti.com

पाठ्यक्रम, नोट्स तथा बैच संबंधी updates निरंतर पाने के लिये निम्नलिखित पेज को "like" करें
www.facebook.com/drishtithevisionfoundation
www.twitter.com/drishtiias

JPSC DLP विषय सूची (Contents)

1.	**भारत दुर्दशा (भारतेंदु हरिशचंद्र)**	**7-20**
1.1	भारत दुर्दशा की संवेदना	7
1.2	भारत दुर्दशा में भारतेंदु का इतिहास-बोध	9
1.3	क्या भारत दुर्दशा त्रासदी है	10
1.4	भारत दुर्दशा का नाट्य रूप	11
1.5	भारत दुर्दशा की भाषा	12
1.6	भारत दुर्दशा की अभिनेयता/रंगमंचीयता	14
1.7	व्याख्या अभ्यास : भारत दुर्दशा	15
1.8	भारत-दुर्दशा (व्याख्या हेतु महत्त्वपूर्ण अंश तथा उनके प्रसंग)	16
2.	**चंद्रगुप्त (जयशंकर प्रसाद)**	**21-44**
2.1	कथासार	21
2.2	'चन्द्रगुप्त : प्रमुख अंश'	22
2.3	'चंद्रगुप्त में राष्ट्रीय चेतना'	43
2.4	'चंद्रगुप्त में राष्ट्रीय चेतना नारी चेतना'	43
3.	**आधे-अधूरे (मोहन राकेश)**	**45-51**
3.1	प्रस्तावना	45
3.2	'आधे-अधूरे' स्त्री-पुरुष संबंध	46
3.3	'आधे-अधूरे' में चरित्र-सृष्टि	47
3.4	'आधे-अधूरे' का परिवेश	48
3.5	'आधे-अधूरे' की भाषा और संवाद	48
4.	**गोदान (प्रेमचंद)**	**52-95**
4.1	गोदान: से संबधित विविध पक्ष	52
4.2	गोदान में पीढ़ी संघर्ष	53
4.3	"गोदान डूबते हुए सामंतवाद तथा उभरते हुए पूंजीवाद की कथा है" अथवा "गोदान अपने युग का प्रतिबिंब है तथा आने वाले युग की प्रसव पीड़ा"	55

4.4	गोदान में आदर्शवाद बनाम यथार्थवाद	57
4.5	गोदान पर मार्क्सवाद का प्रभाव	59
4.6	गोदान एक महाकाव्यात्मक उपन्यास है	61
4.7	गोदान: एक त्रासदी के रूप में	63
4.8	गोदान का नामकरण	65
4.9	समकालीन विमर्शों के परिप्रेक्ष्य में गोदान का मूल्यांकन	66
4.10	गोदान का दोहरा कथानक या समानान्तर शिल्प	67
4.11	गोदान की भाषा शैली	70
4.12	गोदान की चरित्र योजना	72
4.13	गोदान में मालती और मेहता के संवादों से उभरने वाला जीवन-दर्शन	77
4.14	गोदान पर छायावाद युगीन नारीत्व परिकल्पना, प्रेमदर्शन एवं रोमांटिक दृष्टिकोण का प्रभाव	78
4.15	व्याख्या अभ्यास-1 : गोदान	80
4.16	व्याख्या अभ्यास-2 : गोदान	81
4.17	(व्याख्या के लिये महत्त्वपूर्ण गद्यांश)	82
5.	**मैला आँचल (फणीश्वरनाथ रेणु)**	**96-117**
5.1	मैला आँचल का संवेदना पक्ष	96
5.2	मैला आँचल: एक आंचलिक उपन्यास	101
5.3	मैला आँचल में अंचल का नायकत्व	103
5.4	आंचलिक उपन्यास परंपरा में मैला आँचल के सर्वश्रेष्ठ होने के आधार	104
5.5	मैला आँचल में आंचलिकता व राष्ट्रीयता	105
5.6	रेणु की राजनीतिक चेतना	106
5.7	मैला आँचल के नामकरण का औचित्य	107
5.8	मैला आँचल का शिल्प (गोदान से तुलना सहित)	108
5.9	मैला आँचल की भाषा-शैली	110
5.10	व्याख्या अभ्यास-1: मैला आँचल	112
5.11	मैला आँचल (व्याख्या हेतु महत्त्वपूर्ण गद्यांश)	113

6. राग दरबारी **118-125**

6.1 प्रस्तावना 118

6.2 'राग दरबारी' का संरचना-शिल्प 120

6.3 राग दरबारी में व्यंग्य-शैली 120

6.4 भाषा-प्रयोग के विविध रूप 122

7. बूढ़ी काकी, ईदगाह, कफन व नमक का दारोगा (प्रेमचंद) **126-138**

7.1 बूढ़ी काकी 126

7.2 ईदगाह 127

7.3 कफ़न 128

7.4 नमक का दारोगा 130

7.5 प्रेमचंद की कहानियों में मनोविज्ञान का प्रयोग 135

7.6 प्रेमचंद की कहानी कला 136

8. पाजेब (जैनेंद्र कुमार) **139-146**

8.1 प्रस्तावना 139

8.2 बाल मनोविज्ञान की कहानी : 'पाजेब' 139

8.3 मध्यवर्ग : भौतिक वस्तुओं के प्रति आसक्ति 142

8.4 मध्यर्गीय मानसिकता और बदलते नैतिक मूल्य 144

8.5 कहानी का शिल्प 145

9. गुंडा (जयशंकर प्रसाद) **147-149**

10. अभिशप्त (यशपाल) **150-151**

11. चीफ की दावत (भीष्म साहनी) **152-157**

11.1 प्रस्तावना 152

11.2 मध्यवर्गीय अवसरवादिता और मानवीय मूल्यों का विघटन 152

11.3 आधुनिकता, सुसंस्कृति का पाखंड और अवसरवादिता 154

11.4 कहानी का निहित उद्देश्य 156

11.5 कहानी का कलात्मक पक्ष 156

12. वापसी (उषा प्रियवंदा) **158-170**

12.1 कथावस्तु 158

12.2 कथासार 159

12.3 चरित्र-चित्रण 164

12.4 काहानी का परिवेश 166

12.5 संरचना-शिल्प 167

12.6 संदर्भ सहित व्याख्या हेतु कुछ उदाहरण 169

13. पिता (ज्ञान रंजन) **171-177**

13.1 प्रस्तावना 171

13.2 पिता में पारिवारिक संबंधों के बदलते स्वरूप 172

13.3 सामाजिक यथार्थ 175

13.4 कथासार 176

14. यह अंत नहीं (ओमप्रकाश वाल्मिकी) **178-183**

14.1 कथासार 178

14.2 यह अंत नहीं दलित स्त्री अस्मिता का संघर्ष 179

14.3 पुलिस और पंचायत राज का जातिवादी चरित्र 181

14.4 मूल्यांकन 182

15. उसने कहा था (चंद्रधर शर्मा गुलेरी) **184-192**

15.1 कथावस्तु 184

15.2 चरित्र-चित्रण 186

15.3 परिवेश 189

15.4 संरचना-शिल्प 190

15.5 मूल्यांकन 191

अध्याय
1

भारत दुर्दशा (भारतेंद्र हरिशचंद्र)

1.1 भारत दुर्दशा की संवेदना

भारत दुर्दशा भारतेन्दु हरिश्चन्द्र द्वारा 1875 ई. में रचित एक लघु नाटक है जिसमें उनकी नवजागरण चेतना और राष्ट्रीय बोध विस्तृत रूप से अभिव्यक्त हुआ है। इस प्रतीकात्मक नाटक में भारतेन्दु ने भारत की दुर्दशा के सभी पक्षों को कुछ काल्पनिक प्रतीकों के माध्यम से स्पष्ट किया है।

भारत की दुर्दशा तथा उसके कारण

भारत दुर्दशा में भारतेन्दु ने बताया है कि वर्तमान भारत किस प्रकार विनाश के मार्ग पर बढ़ रहा है। इसकी आर्थिक, राजनीतिक और सामजिक संरचनाएँ पूर्णतः खंडित हो गयी हैं और सबसे अधिक चिन्ता की बात यह है कि भारत के निवासी इस दुर्दशा को दूर करने के लिये प्रतिबद्ध भी नहीं दिखते। इस समस्या की सर्वांगीण समीक्षा करते हुए उन्होंने चुन-चुनकर उन कारणों की खोज की है जिन्हें दूर करना भारत के उज्ज्वल भविष्य के लिये ज़रूरी हो गया है।

भारतेन्दु के अनुसार हमारी इस दुखद स्थिति के लिये बाह्य और आंतरिक-दोनों कारण जिम्मेदार हैं। उन्होंने भारत दुर्दैव की कल्पना में संकेत किया है कि वह अंग्रेज़ी सभ्यता का प्रतीक है जिससे स्पष्ट होता है कि अंग्रेज़ी राज और उसकी शोषणकारी नीतियाँ हमारी इस दशा के कारणों में शामिल हैं। किन्तु, भारतेन्दु उन लोगों में से नहीं हैं जो अपनी समस्याओं का ठीकरा दूसरों पर फोड़कर शांत हो जाते हैं। उनका ईमानदार आत्म-मूल्यांकन इस तथ्य का साक्षी है कि हमारी दुर्दशा के ज्यादा बड़े कारण हमारे भीतर ही निहित हैं। ऐसे मुख्य कारण हैं- धर्म, संतोष, आलस्य, मदिरा, अज्ञान तथा रोग इत्यादि।

धर्म ने हमें ऐसा दर्शन दिया जिससे सब लोग स्वयं को ब्रह्म समझने लगे और स्नेहशून्य हो गए। इतना ही नहीं, शैव-शाक्त आदि मतों ने सांप्रदायिकता पैदा की। जातीय संरचना ने जातिवाद को पैदा किया और बाल-विवाह तथा विधवा विवाह निषेध जैसी स्थितियों ने सामाजिक गतिशीलता को भंग कर दिया। धार्मिक अंधविश्वासों ने परदेस यात्रा से रोककर हमें कूप-मण डूक बना दिया है- दिये

"शैव शाक्त वैष्णव, अनेक मत प्रगटि चलाए
जाति अनेकन करि नीच अरु ऊँच बनायो।"

धर्म का कर्मकाण्डीय रूप हमारी दुर्दशा का सबसे बड़ा कारण है किन्तु संतोष और आलस्य भी कमतर नहीं हैं। संतोष व्यक्ति को निष्क्रिय और प्रयत्नहीन बना देता है। भारतेन्दु ने तुलसीदास ('कोऊ नृप होउ हमें का हानी') व मलूकदास ('अजगर करे न चाकरी, पंछी करे न काम') के कथनों का ज़िक्र तो किया ही है, एक व्यंग्यात्मक ग़ज़ल भी इस संबंध में रची है-

"दुनिया में हाथ-पैर हिलाना नहीं अच्छा
मर जाना पै उठके कहीं जाना नहीं अच्छा।"

इसके अतिरिक्त मदिरा और अंधकार ने भी भारत का पर्याप्त नुकसान किया है। उच्च से लेकर निम्न वर्ग तक सभी में मदिरा की महिमा है और इस कारण देश की बहुत सारी आर्थिक और मनोवैज्ञानिक क्षमता नष्ट हो जाती है। भारतेन्दु ने व्यंग्य करते हुए बताया है कि वर्तमान समय में कोई चाहे धर्माधीश हो; बुद्धिजीवी हो; वकील हो या ईश्वर ही क्यों न हो, सभी मदिरा के भक्त हैं। वे व्यंग्यपूर्वक कहते हैं-

"मदवा पीले पागल, जीवन बीत्यौ जात,
बिनु मद जगत सार कछु नाहिं, मान हमारी बात।"

इन मुख्य कारणों के साथ भारतेन्दु ने कुछ गौण कारणों का भी उल्लेख किया है जो भारत की दुर्दशा के लिये ज़िम्मेदार हैं। अपव्यय, अदालत, फैशन, सिफारिश को धन-निर्गम के साथ अर्थव्यवस्था को नष्ट करने वाले कारण बताया गया है तो

कारीगरी आई। तुमको उस पर भी वही सीधी बातें, भाँग के गोले, ग्रामगीत, वही बाल्यविवाह, भूत-प्रेत की पूजा, जन्मपत्री की विधि! वही थोड़े में संतोष, गप हाँकने में प्रीति और सत्यानाशी चालें! हाय अब भी भारत की यह दुर्दशा!

प्रसंग– वही

हे भारत! कम-से कम अपने अस्तित्व को तो पहचानो। पहचानो तो सही, तुम क्या थे, और अब क्या हो गए हो। देखो पश्चिम की ओर आधुनिक ज्ञान और विज्ञान रूपी सूर्य ने अपना प्रकाश बिखेरना शुरु कर दिया है। अगर तुम अंग्रेज़ों का राज्य पाकर भी नहीं जागे और अब भी तुमने अपने आपको नहीं संभाला तो यह बुरा होगा। अब तो भारत-भारतेश्वरी ने भारतीय प्रजा को पहचान लिया है। अब चारों ओर विद्या का प्रकाश विकीर्ण हो रहा है। आज भारत में देश-विदेश से नई दस्तकारी और नई कलाएँ आ रही हैं। तुम तो आज भी सीधी-साधी बातों में उलझे हो। बस, भांग चढ़ाते हो और लम्बी तान के सोते रहते हो। बहुत हुआ तो ग्रामीण लोकगीतों मे नाच-कूदकर वक्त बर्बाद कर लिया। आज तुम्हें बाल-विवाह पसंद है। आज भी तेरा भूत-प्रेत की पूजा में मन लग रहा है। वह जन्म-पत्री, टोने-टोटकों मे अपनी बीमारी का इलाज ढूँढ रहा है। जो थोड़ा-बहुत मिल जाए, उसी में संतुष्ट है । चाल-चौपालों में गप हाँकने के सिवाय तुम्हें कोई काम नहीं। वहीं वहीं बैठा हुआ उल्टी-सीधी चाल चलता रहता है। हाय! भारत तुम कितनी दुर्दशा में जी रहे हो।

दीर्घउत्तरीय प्रश्न

1. निम्नलिखित गद्यांशों की संदर्भ सहित व्याख्या कीजिये और उसका भाव-सौंदर्य प्रतिपादित कीजिये।
   (क) हा! भारतवर्ष को ऐसी मोहनिद्रा ने घेरा है कि अब उसके उठने की आशा नहीं। सच है, जो जानबूझकर सोता है उसे कौन जगा सकेगा? हा दैव! तेरे विचित्र चरित्र है, जो कल राज करता था वह आज जूते में टांका उधार लगवाता है। कल जो हाथी पर सवार फिरते थे, आज नंगे पाँव वन-वन की धूल उड़ाते फिरते हैं।
   (ख) हाय! भारत को आज क्या हो गया है? क्या निस्संदेह परमेश्वर इससे ऐसा ही रूठा है? हाय, क्या अब भारत के फिर वे दिन न आवेंगे? हाय, यह वही भारत है, जो किसी समय सारी पृथ्वी का शिरोमणि गिना जाता था।
2. 'भारत-दुर्दशा' प्राय: कथाविहीन, घटनाविहीन नाट्य रचना है। फिर भी इसके मंचन की संभावनाएँ कम नहीं है। अभिनेयता की दृष्टि से विवेचन कीजिये।
3. 'भारत-दुर्दशा' का इच्छित आदर्श क्या है? समीक्षात्मक विश्लेषण प्रस्तुत कीजिये।
4. "भारतेन्दु के कुछ नाटकों में गदर की साहित्यिक प्रतिक्रिया प्रकट हुई है।" 'भारत दुर्दशा' के विशेष संदर्भ में तर्कपूर्ण उत्तर दीजिये।
5. 'भारत दुर्दशा' मे तत्कालीन समाज को जो प्रतिबिंबन हुआ है, वह आज कहाँ तक प्रासंगिक है? युक्तियुक्त विवेचना कीजिये।
6. 'भारत दुर्दशा' का हिंदी नव-जागरण से क्या संबंध है? तर्कपूर्ण उत्तर दीजिये।
7. 'भारत दुर्दशा' में व्यक्त भारतीय नवजागरण की चिंता का स्वरूप स्पष्ट कीजिये।
8. 'भारत दुर्दशा' में प्रतिबम्बित तत्कालीन भारत की परिस्थितियों और उन्हें लेकर लेखक की चिंताओं का विवेचन कीजिये।

अध्याय
2

चंद्रगुप्त (जयशंकर प्रसाद)

2.1 कथासार

यह नाटक कुल चार अंकों में विभाजित है। चारों अंक में मुल 44 दृश्य हैं। पूरे नाटक में मुख्य तीन घटनाएं हैं। अर्थात् तीन महत्त्वपूर्ण कथा को लेकर उसकी रचनाकी गई है। उसके साथ-साथ कई उपकथाएं हैं, जिनकी संख्या आठ है। तीन मुख्य कथा इस प्रकार से हैं:

1. सिकंदर का आक्रमण, 2. नंदवंश का नाश, 3. सिल्यूकस की हार।

इस नाटक में जो अन्य आठ प्रासंगिक या उप कथाएं हैं वे इस प्रकार से हैं:

1. चन्द्रगुप्त और कल्याणी की प्रेम कथा
2. चन्द्रगुप्त एवं कार्नेलिया की प्रेम कथा
3. चन्द्रगुप्त तथा मालविका का प्रणय
4. सिंहरण तथा अलका की प्रेम कथा
5. राक्षस और सुवासिनी की प्रेम कथा
6. पर्वतेश्वर की कथा
7. शकटार की कथा
8. राक्षस और चाणक्य में संघर्ष की कथा।

नाटक के पहले अंक में कथा के प्रमुख पात्रों से हमारा परिचय होता है। इनमें हैं सिंधु देश की राजकुमारी मालविका, शकटार की कन्या सुवासिनी, पंजाब का राजा पार्वतेश्वर, मगध का आमात्य राक्षस, अलक्षेन्द्र,

सेनापति सिल्यूकस, तपस्वी दांड्यायन आदि। नंद मगध का शक्तिशाली राजा है उसका राज्य काफी विस्तृत चाणक्य नाम का विद्वान तक्षशिला छोड़ कर पाटलिपुत्र आता है। उसका घर नंद द्वारा उजाड़ दिया जाता है। चाणक्य नंद के दरबार में आता है। नंद भरी सभा में चाणक्य का अपमान करता है। चाणक्य को इस अपमान से काफी ठेस पहुँचती है। वह प्रतिज्ञा करता है कि इस दुष्ट घमंडी शासक का गर्व चूर्ण करेगा। नंद उसे कारागार में डाल देता है। चंद्रगुप्त नामक प्रतिभासंपन्न युवक चाणक्य को करागार से मुक्त कराता है। चाणक्य तथा चन्द्रगुप्त पंजाब का राजा पर्वतेश्वर से मिलकार भावी योजना बनाते हैं। अलक्षेन्द्र उन्हें विदेशी आक्रमण की आशंका से आगाह करता है। अलक्षेन्द्र तपस्वी दांडयान से मिलकर भारत पर विजय पाने के लिये आशीर्वाद मांगता है। इस अंक में हम देखते हैं कि युवकों का एक समूह मिलकर यह योजना बना रहे होते हैं कि देश पर विदेशी आक्रमण को कैसे रोका जाए। इस अंक की कथा मगध से गंधार प्रदेश तक फैली हुई है। इमी अंक में हम देखते है कि प्रतिभासंपन्न युवक चन्द्रगुप्त को भारत का भावी सम्राट होने की घोषणा की जाती है। और यह घोषणा करते हैं तपस्वी दांड्यान। इस अंक में कई जगह संघर्ष दिखाया गया है। एक तरफ नंद तथा चाणक्य में संघर्ष तो दूसरी तरफ सिंधु प्रदेश में संघर्ष की स्थिति। तीसरा संघर्ष बौद्ध तथा हिंदू धर्म का है। राक्षस बौद्ध धर्म का प्रतिनिधित्व करता है तो चाणक्य वैदिक धर्म का। दूसरे अंक में पंचनद के शासक पर्वतेश्वर तथा अलक्षेन्द्र के बीच युद्ध को दिखाया गया है। इस युद्ध में चंद्रगुप्त, चाणक्य, अलका और सिंहरण पर्वतेश्वर का साथ देते हैं। इस युद्ध में यघपि पर्वतेश्वर की हार होती है लेकिन फिर अलर्वेन्द्र के साथ असकी संधि हो जाती है। अपने देश वापस जाने से पहले अलर्वेन्द्र शुद्रोंपर आक्रमण करने की योजना बनाता है इस बीच चाणक्य अपने प्रयासों से चन्द्रगुप्त को मालव और शूद्रों का सेनापति बना देता है। वह अपनी चलाकी से पर्वतेश्वर को भी मना लेता है कि वह अलक्षेन्द की सहायता न करे। फिर अलक्षेन्द्र तथा चन्द्रगुप्त का युद्ध होता है जिसमें अलक्षेन्द्र की हार होती है। चन्द्रगुप्त अलक्षेन्द्र को माफ कर देता है और उसे यवन सेनापति को सौंप देता है इस अंक में नाटक के एक महत्त्वपूर्ण पात्र तथा सिल्यूकस की पुत्री कार्नोलिया से हमारा परिचय होता है।

अध्याय
3

आधे-अधूरे (मोहन राकेश)

3.1 प्रस्तावना

'आधे-अधूरे' न केवल समकालीन हिंदी नाट्य-लेखन बल्कि राकेश के पूर्ववर्ती दोनों नाटकों से भिन्न आधुनिक मध्यवर्गीय जीवन, अनुभव और परिवेश से सीधे साक्षात्कार करने वाला पहला सार्थक एवं प्रामाणिक नाटक है। यह मौजूदा महानगरीय भारतीय पारिवारिक जीवन की विडम्बना के कुछेक सघन बिंदुओं और स्त्री-पुरुष संबंधों की विसंगतियों का जीवन्त रेखांकन करता है।

'आधे-अधूरे' में मध्यवर्ग

'आधे-अधूरे' की पारिवारिक, आर्थिक, सामाजिक और मनोवैज्ञानिक स्थितियों पर गंभीरता से विचार करें तो निम्नलिखित तथ्य स्पष्टत: हमारे सामने उभरकर आते हैं:

- इसका स्थान और परिवेश महानगर दिल्ली है- 'काफी अच्छा आदमी है जगमोहन! और फिर से दिल्ली में उसका ट्रांसफर भी हो गया है। मिला था उस दिन कनॉट प्लेस में'- पुरुष एक।'
- उसका समय छठे दशक के आसपास का है, जब केवल पाँच पैसे में अखबार आ जाता था और रुपए-डेढ़ रुपए में स्कूटर से आया-जाया जा सकता था। दृष्टव्य: बड़ी लड़की के प्रवेश के बाद पुरुष एक के संवाद।

डेढ़-दो दशक पहले यह एक व्यवसायी परिवार था, जिसमें घर में सोफा सेट, कबर्ड, डायनिंग और ड्रेसिंग टेबल है। पुरुष एक (महेंद्रनाथ) ने मित्र जुनेजा के साथ मिलकर पहले प्रेस और फिर फैक्ट्री लगाई थी। जब 'चार सौ रुपए मकान का किराया था। टैक्सियों में आना-जाना होता था। किस्तों पर फ्रिज खरीदा गया था। लड़के-लड़की की कान्वेंट की फीसें जाती थीं....।'

'शराब आती थी। दावतें उड़ती थीं.....'। अर्थात् पति-पत्नी तथा बच्चे सभी शिक्षित हैं। आर्थिक स्थिति अच्छी है और समाज में प्रतिष्ठा है। स्पष्ट है कि यह एक उच्च-मध्यवर्गीय परिवार है।

लेकिन इस बीच, प्रेस और फैक्ट्री बंद हो गई। महेंद्रनाथ कर्ज़दार, बेरोज़गार और निकम्मा हो गया। बेटे ने पढ़ाई बीच में छोड़ दी और फिर नौकरी भी। बड़ी बेटी ने घर से भागकर माँ के प्रेमी से चुपचाप शादी कर ली। छोटी बेटी अभी जैसे-तैसे पढ़ रही है और प्रतिदिन कुंठित और उद्दण्ड होती जा रही है। स्त्री (सावित्री) बेहतर जिंदगी के लिये किसी पूरे पुरुष की तलाश में - यहाँ-वहाँ भटकते और नौकरी करते हुए बमुश्किल तमाम किसी तरह घर की गाड़ी खींच रही है।

आज घर में रखे सोफा सेट, कबर्ड, डाइनिंग और ड्रेसिंग टेबल, कुर्सियाँ, टी-सेट इत्यादि टूटीफूटी हालत में हैं और गद्दे, परदे, मेजपोश और पलंगपोश घिसे, फटे या सिले हुए हैं। घर के सभी सदस्यों में असंतोष, तनाव, घुटन, टूटन और संघर्ष की स्थिति है। स्पष्ट है कि यह एक निम्न मध्यवित्तीय स्तर का घर है, जिसमे एक विघटित होते परिवार का जीवंत चित्रण हुआ है। 'घर' की तलाश राकेश के जीवन का प्रमुख उद्देश्य और उनके नाटकों का मूल कथ्य रहा है। 'आधे-अधूरे' में भी टूटते संबंधों और बिखरते परिवार के चित्रण के माध्यम से राकेश का केंद्रीय सरोकार घर की तलाश ही है।

'आधे-अधूरे' हमारे आज के समाज के ऐसे तमाम लोगों की अभिशप्त जिंदगी का प्रामाणिक दस्तावेज है जिन्होंने जीवन की तमाम इच्छाओं-आकांक्षाओं और उपलब्धियों को भौतिक सुखसुविधाओं से जोड़ लिया और इस मृग मरीचिका में फंसकर पारिवारिक संबंधों की सहज प्राप्य आत्मीयता, ऊष्मा और भावनात्मक सुरक्षा तथा आत्मिक शांति को पूरी तरह खो दिया। सांसारिक अर्थ के चक्कर में जीवन का मूल अर्थ ही कहीं गुम हो गया। मोहन राकेश के शब्दों में इस नाटक में, 'अधूरे' का मतलब इनकम्पलीट और आधे का मतलब हॉफ है। यह आज के सामान्य वर्ग से संबंधित है जो अपने में 'आधा' भी है और 'अधूरा' भी। यह इस शहर के एक मध्यवर्गीय परिवार की कहानी है जिसे परिस्थितियाँ निचले वर्ग की ओर धकेलती

अध्याय
4

गोदान (प्रेमचंद)

4.1 गोदानः से संबधित विविध पक्ष

गोदान का युगीन यथार्थ

- "गोदान दो पीढ़ियों की टकराहट की कथा है जो मुख्यतः होरी और गोबर के द्वंद्व से व्यक्त हुई है।" इस कथन के आलोक में गोदान में विद्यमान पीढ़ी संघर्ष पर विचार करें।
- "गोदान अपने युग का प्रतिबिंब भी है और आने वाले युग की प्रसव पीड़ा भी"- विचार करें।
- "गोदान डूबते हुए सामंतवाद तथा उभरते हुए पूंजीवाद के संक्रमणकाल की कहानी है।" इस कथन के परिप्रेक्ष्य में गोदान की समीक्षा करें।
- "प्रेमचंद ने गोदान में अपने समय के भारत की सभी समस्याओं को प्रस्तुत किया है, उनकी नज़र से कुछ भी ओझल नहीं हुआ है।" इस कथन के संदर्भ में गोदान में चित्रित समस्याओं पर चर्चा करें।

आदर्शवाद तथा यथार्थवाद

- "गोदान तक आते-आते प्रेमचंद का आदर्शोन्मुख यथार्थवाद पूरी तरह यथार्थवाद में रूपांतरित हो गया है।" विचार करें।
- क्या गोदान सचमुच यथार्थवादी उपन्यास है या उसमें आदर्शवाद के अवशेष मौजूद हैं? प्रमाण सहित चर्चा करें।
- कुछ आलोचकों की राय है कि गोदान में व्यक्त होने वाला यथार्थवाद मार्क्सवाद से प्रेरित समाजवादी यथार्थवाद है। आप इस मत से कहाँ तक सहमत हैं। युक्तियुक्त (तार्किक) विवेचन करें।
- क्या गोदान पर मार्क्सवाद का प्रभाव दिखाई पड़ता है? यदि हाँ, तो कितना और किस रूप में?
- क्या गोदान में प्रेमचंद ने समाधान पक्ष के प्रति अपना नज़रिया प्रस्तुत किया है? सूक्ष्म निरीक्षण करें।

महाकाव्यात्मक उपन्यास

- गोदान को हिन्दी का पहला महाकाव्यात्मक उपन्यास कहा जाता है। इस संदर्भ में महाकाव्यात्मक उपन्यास की धारणा स्पष्ट करते हुए इस दावे पर विचार करें।
- क्या गोदान को 'राष्ट्रीय जीवन का प्रतिनिधि उपन्यास' कहा जा सकता है? इस संबंध में आलोचकों द्वारा उठाई जाने वाली समस्याओं की चर्चा करते हुए गोदान का पक्ष प्रस्तुत करें।
- गोदान भारतीय 'ग्रामीण जीवन का महाकाव्य' है। विचार करें।
- गोदान 'भारतीय कृषक की त्रासद महागाथा' है। सिद्ध करें।
- गोदान भारतीय किसान के जीवन का महाकाव्य है। विचार करें।

त्रासदी

- त्रासदी की धारणा स्पष्ट करते हुए बताएँ कि क्या गोदान को 'ट्रेजिक उपन्यास' कहा जा सकता है? यदि हाँ, तो यह किसकी ट्रेजिडी है-होरी की, धनिया की, भारतीय किसान की या किसी और की?
- 'होरी की कहानी दुखों से भरी एक लंबी कहानी है किन्तु इसमें बीच-बीच में सुख के क्षण भी आते रहते हैं।' विचार करें।

अध्याय
5

मैला आँचल (फणीश्वरनाथ रेणु)

5.1 मैला आँचल का संवेदना पक्ष

मैला आँचल हिन्दी का प्रतिनिधि आंचलिक उपन्यास है और इस कारण इसके कथ्य में प्रायः वे सारी विशेषताएँ मिलती हैं जो किसी भी आंचलिक उपन्यास में पाई जाती हैं। आंचलिक उपन्यास में जो परिवेश लिया जाता है, वह समय और स्थान में सीमित होता है किंतु उस सीमित समय और स्थान में जीवन के जितने पक्ष हो सकते हैं, उन पक्षों के जितने चेहरे हो सकते हैं, वे सब उसमें पूरे विस्तार के साथ विद्यमान होते हैं। मैला आँचल भी ऐसे ही कथ्य को धारण करता है।

भौगोलिक पक्ष

यद्यपि समग्रता के लिये आंचलिक उपन्यासकार को जीवन के सभी पक्षों की प्रस्तुति करनी होती है, लेकिन मूल रूप से भौगोलिक और सांस्कृतिक वर्णन इस उपन्यास में प्रमुख होते हैं। यह प्रमुखता इस रूप में नहीं होती है कि इन पक्षों का विस्तार सबसे अधिक हो बल्कि इस रूप में होती है कि यही दो पक्ष आंचलिक उपन्यास को 'आंचलिकता' प्रदान करते हैं। इस उपन्यास में इन दोनों बिंदुओं पर पर्याप्त ध्यान देते हुए रचनाकार ने जीवन के सारे पहलुओं को, चाहे वे सामाजिक हों राजनीतिक हों, या आर्थिक हों, यथोचित स्थान दिया है।

रेणु ने सबसे पहले अंचल का सामान्य भौगोलिक वर्णन किया है ताकि पाठक उस अंचल तक पहुँच सके जिसके सारे जीवन को वह आगे महसूस करने वाला है। उपन्यास की शुरुआत में ही वे भौगोलिक परिचय देते हैं –

> *"ऐसा ही एक गाँव है मेरीगंज। रौतहट स्टेशन से सात कोस पूरब, बूढ़ी कोशी को पार करके जाना होता है। xxxx तड़बन्ना के बाद ही एक बड़ा मैदान है जो नेपाल की तराई से शुरु होकर गंगा जी के किनारे खत्म हुआ है। लाखों एकड़ जमीन! बंध्या धरती का विशाल अंचल। xxxx कोस-भर मैदान पार करने के बाद, पूरब की ओर काला जंगल दिखाई पड़ता है; वही है मेरीगंज कोठी।"*

बाहरी भूगोल का वर्णन करने के बाद रचनाकार गाँव के भीतरी भूगोल पर दृष्टि डालता है ताकि अंचल की एक आंतरिक पहचान भी पाठक को हो सके। उपन्यासकार लिखता है-

> *"मेरीगंज एक बड़ा गाँव है, बारहो बरन के लोग रहते हैं। गाँव के पूरब एक धारा है जिसे कमला नदी कहते हैं। बरसात में कमला भर जाती है, बाकी मौसम में बड़े-बड़े गढ़ों में पानी जमा रहता है।"*

भौगोलिक परिचय देने के बाद रेणु उस अँचल के समग्र जीवन का अंकन करना शुरु करते हैं। इसमें सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक पक्ष अपने हर रूप-रंग में व्यक्त होते चलते हैं और धीरे-धीरे पाठक खुद को उस गाँव में ही महसूस करने लगता है।

सामाजिक जीवन

- **जाति व्यवस्थाः** जाति व्यवस्था भारत के किसी भी सामान्य गाँव के सामाजिक जीवन की धुरी के रूप में काम करती है। मेरीगंज का पूरा समाज जाति के आधार पर वर्गीकृत है और जातीय किस्म के झगड़े होना वहाँ सामान्य सी बात है। जातियों के बीच का शक्ति संतुलन भी गाँव की सामाजिक संरचना निर्धारित करता है। उपन्यासकार उपन्यास के आरंभ में ही इस संरचना को स्पष्ट करते हुए कहता है –

  > *"अब गाँव में तीन प्रमुख दल हैं- कायस्थ, राजपूत और यादव। ब्राह्मण अभी भी तृतीय शक्ति हैं। गाँव के अन्य जाति के लोग भी सुविधानुसार इन्हीं तीनों दलों में बँटे हुए हैं।"*

अध्याय
6

राग दरबारी

6.1 प्रस्तावना

'रागदरबारी का संबंध एक बड़े नगर के कुछ दूर बसे हुए गाँव की जिंदगी से है जो आजादी के बाद की प्रगति और विकास के नारों के बावजूद निहित स्वार्थों और अनेक अवांछनीय तत्त्वों के आघातों के सामने घिसट रही है। यह उसी जिंदगी का दस्तावेज है।' इससे स्पष्ट है कि 'राग दरबारी' का विषय शिवपाल गंज और उसकी छाती पर सवार वैद्य जी और उनकी बैठक है। इस दृष्टि से यह बैठक ही दरबार है, जिसके राग से पूरा गाँव-समाज संचालित है। सतह पर यह उपन्यास उसी जिंदगी का दस्तावेज दिखाई दे सकता है। लेकिन वास्तविकता यह है कि लखनऊ जैसे किसी बड़े शहर से कुछ मील की दूरी पर सड़क के किनारे बसा गाँव-कस्बा शिवपाल गंज हिन्दुस्तान के नक्शे में ढूँढ़ने पर शायद न मिले। बावजूद इसके उपन्यास का शिवपालगंज आजादी के बाद विकसित हुए हिन्दुस्तान में कहीं भी मिल सकता हौ इस लिये वैद्य जी के दरबार का राग अपनी आंचलिक सीमाओं का अतिक्रमण कर समूचे देश का राग बन जाता है। इसलिये दरबार की वास्तविक स्थिति देश के बड़े-बड़े प्रतिष्ठान यहाँ तक संसद और विधानसभाओं द्वारा स्थापित सत्ता प्रतिष्ठानों की चहारदीवारी में पहुँच जाती है।

राग दरबारी शीर्षक की सार्थकता

शीर्षक की यह अर्थवत्ता 'राग दरबारी' की अंतर्वस्तु की सावदिशिकता द्वारा व्यंजित होती है। इस उपन्यास की अंतर्वस्तु की परिधि इतनी व्यापक है कि संपूर्ण देश की प्रशासन-व्यवस्था, न्याय-व्यवस्था और अर्थ-व्यवस्था की पूरी झाँकी मिल जाती है। पंचायत, ग्राम-सभा, सहकारी समितियों के चुनावों में वे सभी हथकंडे अपनाएं जाते हैं जो विधान सभा ओर संसद के चुनावों की चीज हैं। राष्ट्रीय प्रजातंत्रवाद के परिणामस्वरूप सत्ता की राजनीति, विरोध की राजनीति, गुटबंदी, भ्रष्टाचार, तिकड़म, शोषण-उत्पीड़न आदि नीचे से ऊपर की ओर नहीं, वरन् ऊपर से नीचे की ओर आ रहे हैं गाँव के कथा का केंद्र बनकर भी उपन्यासकार के दरबार के राग को कभी मद्धिम नहीं होने दिया है। इसलिये शीर्षक की संकुचित न होकर और अधिक विस्तृत ही हुआ है। अत: 'राग दरबारी' केवल वैद्य जी की बैठक (दरबार) का ही राग न होकर समूचे देश के प्रमुख सत्ता-प्रतिष्ठानों का भी राग बन जाता है। अपने इस रूप में उपन्यास का शीर्षक अत्यंत सार्थक है।

'राग दरबारी' की अंतर्वस्तु का वास्तविक स्वरूप

श्रीलाल शुक्ल ने इस उपन्यास में ग्रामीण संदर्भों में हमारे राष्ट्रीय जीवन की उस परख को आकलित किया है; जो बीच-पच्चीस वर्षों की तथाकथित उपलब्धियों के परिप्रेक्ष्य में विकलांग एवं विद्रूप प्रतीत हो रही हैं। इस दृष्टि से एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न हमारे सामने आता है कि क्या ग्राम-विकास पूरे देश के विकास से कटकर अलग से अंकित किया जा सकता है? सार्वदेशिक विकास-चित्र में आंतरिक परिवर्तन के स्तर पर हमारा राष्ट्रीय वास्तव गाँव-समाज के वास्तव से भिन्न नहीं हैं। विकास के नाम पर गाँव में प्राथमिक चिकित्सा केंद्र हैं, प्राइमरी स्कूल हैं और इन सबका नियमन करने वाली गाँव की पंचायत भी है। लेकिन वास्तविकता क्या है? गाँव के मरीजों में मुफ्त वितरण के लिये चिकित्सा केंद्र की अंग्रेजी दवाएँ और असहाय बच्चों में वितरित होने के लिये प्राइमरी स्कूल में आए अमेरिकी दूध के डिब्बे, गाँव-प्रधान सनीचर की दुकान पर चोरी-छिपे बिकते हैं इससे केवल सनीचर या वैद्यजी की असलियत का ही पर्दाफाश नहीं होता, वरन् केंद्रीय सरकार की अर्थनीति और राष्ट्रीय विकास के लिये निर्मित योजना आयोग तथा उसकी बहुमुखी विकास योजनाओं की वास्तवकिता की भी कलई खुती है।

अध्याय
7

बूढ़ी काकी, ईदगाह, कफन व नमक का दारोगा (प्रेमचंद)

7.1 बूढ़ी काकी

बूढ़ी काकी 1921 ई. की कहानी है जिसमें प्रेमचंद ने आदर्शवाद और यथार्थवाद का गहरा संश्लेषण किया है। इसके केंद्र में वृद्ध समस्या है। वे बूढ़ी काकी नामक चरित्र के माध्यम से दिखाते हैं कि जब वृद्ध लोग अपनी संपत्ति नयी पीढ़ी को सौंप देते हैं तो उसके बाद उनका हश्र क्या होता है? इसमें बूढ़ी काकी अपने एकमात्र बचे वारिस भतीजे पं. बुद्धिराम और उसकी पत्नी रूपा पर आश्रित है। ये दोनों ही बूढ़ी काकी को अक्सर निरादृत करते हैं। घर में सिर्फ एक सदस्य है जिसे बूढ़ी काकी से प्रेम है, वह है-बुद्धिराम और रूपा की बेटी लाडली।

कथासार

कहानी के केंद्र में एक घटना को रखा गया है। लाडली के भाई सुखराम का तिलक होने वाला है और घर पर बहुत बड़ी दावत का आयोजन किया गया है। बूढ़ी काकी की सारी इच्छाएँ प्रेमचंद के शब्दों में जिह्वा पर केंद्रित हो गई हैं जिसके कारण अच्छा भोजन करने की इच्छा उन्हें बार-बार उद्वेलित करती है। वह दो बार चोरी-छिपे उस स्थान पर जाती हैं जहाँ भोजन बन रहा है किन्तु एक बाद बुद्धिराम द्वारा और एक बार रूपा द्वारा लताड़ खाकर वापस लौटती हैं। अच्छे भोजन की तीव्र इच्छा के सामने बूढ़ी काकी को आत्मसम्मान का बोध भी नहीं रहता। भोज खत्म हो जाता है, सब मेहमान खाकर लौट जाते हैं, किंतु रूपा बूढ़ी काकी को भोजन कराना भूल जाती है। लाडली रात को चोरी-छिपे बूढ़ी काकी की कोठरी में जाकर उन्हें कुछ भोजन कराती है किन्तु थोड़ा सा खाना खाने के बाद तो काकी की भूख और प्रचण्ड हो उठती है। अंत में वह लाडली के साथ वहाँ जाती हैं जहाँ सब मेहमानों ने अपने जूठे पत्तल छोड़े थे। उन्हीं पत्तलों से बचा-खुचा खाना खाकर वह संतोष प्राप्त करती हैं। तभी रूपा की नींद खुलती है और वह काकी की यह स्थिति देखकर ग्लानि से भर उठती है। उसे महसूस होता है कि जिस काकी की संपत्ति के कारण उसकी गृहस्थी को हर वर्ष दो सौ रुपये मिलते हैं, वह उसे भोजन तक नहीं करा पायी। हृदय परिवर्तन के इसी बिन्दु पर कहानी खत्म होती है और रूपा प्रेमपूर्वक काकी को भोजन कराती है।

संवेदना

इस कहानी की संवेदना का सबसे महत्त्वपूर्ण विषय वृद्धावस्था में निहित सामाजिक असुरक्षा तथा अशक्तता है। इस दृष्टि से यह भीष्म साहनी की कहानी 'चीफ की दावत' के काफी नज़दीक है, जिसमें एक बेटा और बहू अपने बॉस को निमंत्रण देते हैं तथा अपनी माँ को अप्रस्तुतियोग्य मानकर कोठरी में बंद कर देते हैं- वह भी इस हिदायत के साथ कि वह सोये नहीं क्योंकि उसके खर्राटों की आवाज़ महफिल का मज़ा किरकिरा कर सकती है। इसमें वृद्धों को मानवीय सहजता के साथ देखने की वकालत भी की गई है। वृद्ध लोग इच्छाओं से रहित नहीं होते बल्कि उनमें इच्छाएँ प्रबल होती हैं-यह बताकर प्रेमचंद संकेत करते हैं कि वृद्धों को 'चुका हुआ' व्यक्ति न मानकर उनकी इच्छाओं का सम्मान किया जाना चाहिये। इसी प्रकार, लाडली के माध्यम से वे यह भी दिखाते हैं कि बच्चों की सहजता सामाजिक संबंधों के निर्वाह के लिये कितनी ज़रूरी होती है।

कुछ दलित चिंतकों ने 'बूढ़ी काकी' के एक प्रसंग पर सवाल खड़ा किया है। उनके अनुसार, किसी भी वृद्ध को जूठे पत्तल चाटने पड़ें- यह अपने आप में समाज के लिये शर्म की बात है, किन्तु प्रेमचंद ने इस समस्या को वर्ण-भेद से जोड़ दिया है। वे इस कहानी में लिखते हैं- *"एक ब्राह्मणी दूसरों की जूठी पत्तल टटोले, इससे अधिक शोकमय दृश्य असंभव*

अध्याय
8

पाजेब (जैनेंद्र कुमार)

8.1 प्रस्तावना

'पाजेब' कहानी में बच्चों की स्वाभाविक लालसाओं, इच्छाओं और प्रतिक्रियाओं का समावेश है, जैसे 'मुन्नी' में आभूषण के लिये स्वाभाविक लालसा है। बालक प्राय: खिलौने चाहते हैं और उनसे खेलना उनकी स्वाभाविक गतिविधि है। इस कहानी का बच्चा आशुतोष साइककिल की मांग करता है, क्योंकि साइकिल उसके लिये एक खिलौने के समान ही है। बच्चों की अनेक प्रतिक्रियाओं तथा गतिविधियों के चित्रण से भी लेखक ने उनकी स्वाभाविक प्रवृत्तियों को कहानी में व्यक्त किया है। महाशय आशुतोष, जो मुन्नी के बड़े भाई थे, पहले तो मुन्नी को सजी-वजी देखकर बड़े खुश हुए। वह हाथ पकड़कर अपनी बढ़िया मुन्नी को पाजेब सहित दिखाने के लिये आस-पास ले गए। मुन्नी की पाजेब का गौरव उन्हें अपना भी मालूम होता था। वह खूब हंसे और ताली पीटी, लेकिन थोड़ी देर बाद वह ठुमकने लगे कि "मुन्नी को पाजेब दी, सौ हम भी बाईसिकिल लेंगे।"

जैनेन्द्र की कहानी 'पाजेब' पहले 'पाजेब' नामक कहानी संकलन में छपी थी। फिर इसे उनके संग्रह 'जैनेंद्र की कहानियाँ के दूसरे भाग में भी सम्मिलित किया गया, जो पूर्वोदय प्रकाशन, दिल्ली से सन् 1953 ई. में छपा था। आधी शताब्दी के बाद भी जैनेंद्र की यह कहानी प्रासंगिक और महत्वपूर्ण है।

इस कहानी का उद्देश्य यह बताना भी है कि बच्चे प्राय: सच बोलते हैं और वे किसी विवशता या दबाव के कारण ही झूठ बोलते हैं अथवा डर या लालच के कारण ऐसा करते हैं। प्राय: देखा जाता है कि माता-पिता या परिवार के लोग उन पर संदेह करके या उन्हें डरा धमका कर झूठ बोलने या गलत व्यवहार करने के लिये विवश करते है। पाजेब के खो जाने को चोरी समझने और बच्चों पर संदेह करने से बल्कि उन पर आरोप लगाने से बच्चों पर जो कुछ बीतती है, उसका रोचक वर्णन इस कहानी में किया गया है।

8.2 बाल मनोविज्ञान की कहानी : 'पाजेब'

कहानी के पहले ही प्रसंग से बुआ द्वारा मुन्नी और आशुतोष के लाड़प्यार का संक्षिप्त वर्णन है। बुआ मुन्नी को पाजेब खरीद कर देती है, जिस से मुन्नि की आभूषण की लालसा की ओर संकेत शुय में ही मिल जाता है। बुआ आशुतोष को उसके जन्मदिन पर साइकिल देने का आश्वासन देती है। परिवार में यदि एक बच्चे को कुछ दिया जाए तो दूसरे बच्चों में ईर्ष्या पैदा होती है। यह ईर्ष्या भी बच्चों की स्वाभाविक लालसा से उत्पन्न होती है। आशुतोष बुआ से कोई वस्तु नहीं पाता, पर साइकिल का आवश्वासन पाकर संतुष्ट हो जाता है। मुन्नी द्वारा पाजेब की मांग और आशुतोष द्वारा साइकिल की मांग में केवल रूचि भेद का ही अंतर नहीं है, बल्कि जैविक अंतर भी है और परिवार में लड़की तथा लड़के के पालन-पोषण में किया जाने वाला अंतर भी है। परिवार में लड़के का जन्मदिन एक महत्त्वपूर्ण तिथि है, जिसे उल्लासपूर्वक मनाया जाता है, पर लड़की का जन्मदिन मनाने की परंपरा भारतीय परिवारों में प्राय: नहीं है। मुन्नी पाजेब पाकर फुदकती-नाचती सब को दिखाती फिर रही है और आशुतोष अपने जन्मदिन पर मिलने वाली साइकिल की कल्पना में मग्न है। उनकी बाल सुलभ चेष्टाओं का लेखक ने कुशल अंकन किया है। बच्चों की स्वाभाविक इच्छाओं, उनकी भोली चेष्टाओं की निर्व्याज अभिव्यक्ति कहानी के शुरू में ही मिल जाती है। यह मानो कहानी की प्रस्तावना है। प्रस्तावना में ही लेखक मनोवैज्ञानिक तेवर अपना लेता है, जो बालकों के आपसी संवादों, उनकी बाल सुलभ चेष्टाओं द्वारा प्रकट होता है।

इसके बाद एक पाजेब के न मिलने की सूचना दी जाती है। एक पाजेब का खो जाना चोरी में बदल जाता है। घर में अक्सर चीजें ठीक अवसर पर नहीं मिलती और खो भी जाती हैं, पर चाँदी की एक पाजेब का खो जाना परिवार के लिये एक महत्त्वपूर्ण घटना है। वह एक वस्तु की अनुपस्थिति नहीं आभूषण की अनुपस्थिति है। आभूषण का भारतीय मध्यवर्गीय परिवारों में विशेष महत्त्व है। इसलिये पाजेब का खोना तुरंत चोरी में बदल जाता है। पाजेब भी एक वस्तु है, पर वह चांदी

अध्याय
9

गुंडा (जयशंकर प्रसाद)

'इन्द्रजाल' कहानी-संग्रह में संगृहीत जयशंकर प्रसाद जी की कहानी 'गुंडा 'हिन्दी की श्रेष्ठ कहानियों में स्थान रखती है। इस कहानी की कथा वाराणसी के परिवेश पर आधारित है। ईसा के अठारहवीं शती के अंतिम भाग में समस्त न्याय और बुद्धिवाद को शस्त्र-बल के समक्ष परास्त होते एक नवीन संप्रदाय (वर्ग) की सृष्टि का प्रसाद जी ने उल्लेख किया है, जिन्हें काशी के लोग गुंडा समझते हैं उनका धर्म वीरता था जिसका प्रदर्शन वे अन्याय, अत्याचार के विरूद्ध निर्बलों और असहायों की रक्षार्थ करते थे। ऐसे ही एक पात्र नन्हकू सिंह का इस कहानी में जिक्र है, जो काशी के प्रतिष्ठित जमींदार बाबू निरंजन सिंह का वीर पुत्र है। जीवन की किसी 'अलभ्य अभिलाषा' के पूर्ण न होने पर वह मानसिक चोट से घायल हो जाता है, परंतु स्वाभिमान के साथ निर्भय होकर अपने साथियों को लेकर काशी की गलियों में घूमता रहता हैं। वहीं की एक तवायफ की लड़की-दुलारी से नन्हकू के राजमाता-पन्ना के प्रति मधुर संबंधों का पता चलता है, जो अपने पुत्र राजा चेतसिंह के साथ काशी के आतंकपूर्ण, भय और सन्नाटे के माहौल में कैद कर ली गई हैं। जब दुलारी के माध यम से नन्हकू सिंह को इस बात की जानकारी मिलती है। तो उसका मन अधीर हो उठता है। वह अपनी जान पर खेलकर अपने साथियों के साथ उन्हें उस कैद से आजाद करने के लिये निकल पड़ता है। वहाँ पहुँचकर वह अपने प्रयत्न में सफल होता है। वह स्वयं तिलंगों की संगीनों के सामने चट्टान सदृश खड़ा होकर अविचलित भाव से तलवार चलाता हुआ राजमाता और राजपरिवार की रक्षा करता हुआ अपने प्राणों की आहुति दे देता है।

सजग साहित्यकार प्रसाद जी ने इस कहानी के माध्यम से काशी के गुंडों की विशेषताओं को रेखांकित करने की कोशिश की है, जिनमें आजादी की ललक है, जो मानवीय भावनाओं से पूर्ण है।

गुंडा कहानी के मुख्य बिंदु

- ईसा की अठारहवीं शती के अंतिम भाग में काशी नगरी में समस्त न्याय और बुद्धिवाद को शस्त्रबल के सामने झुकते देख एक नवीन संप्रदाय की सृष्टि को लेखक ने उल्लेख किया हैं, जिन्हें वहाँ के लोग गुंडा समझते थे। उनका 6 गर्म वीरता था जिसे वे अन्याय, अत्याचार के विरूद्ध निर्बलों और असहायों की रक्षा करने में व्यक्त करते थे। ऐसे ही एक पात्र नन्हूकसिंह का जिक्र है, जो जमींदार बाबू निरंजनसिंह का वीर पुत्र है।
- नन्हकूसिंह पन्न से प्रेम करता था, पर राजा बलवंतसिंह द्वारा बलपूर्वक उसके रानी बनाए जाने पर वह मानसिक चोट से घायल हो जाता है। अव्यक्त-प्रेम की कसक और असफ प्रेम का प्रतिशोध उसकी जीवन-धारा का रूप बद देती है। वह नन्हकू से गुंडा नन्हकूसिंह बन जाता है। पर उसे अफसोस इस बात का है कि राजा बलवंतसिंह से बदला लेने के लिये वह गुंडा तो बना, लेकिन वह उसके 'कलेजे में बिछुवा न उतार' सका।
- बलवंतसिंह से तो वह प्रतिशाोध नहीं ले पाता लेकिन अपनी संपत्ति को पानी की तरह बहाता है, क्योंकि उससे संपत्ति और उस संपत्ति पर टिके समाज से सख्त नफरत हैं संगठित शक्ति के मुकाबले संगठित विकल्प (प्रतिरोध) न होने सके कारण प्रतिशोध की भावना 'एंटीहीरो' को जन्म देती है। नन्हकू सिंह को अपराधी बनाने वाली शक्तियों का समाज पर प्रस्था है। राजा बलवंतसिंह की जबरदस्ती, हेस्टिग्स और उसके प्रशासकों-सहयोगियों के अत्याचार एक वर्ग की संस्कृति है उनके अपराध राज्य और कानून की दृष्टि में अपराध नहीं है। इस निरंकुश-सत्ता के अपराधों का संगठित प्रतिवाद न होने कथति में जीने और उनसे लड़ने के लिये यह संप्रदाय (गुंडा) प्रसिद्ध है।
- अत्याचार संगठित है और वैधानिक है। वह अमानवीय समाज को जन्म देता है, जो मनुष्य की भावना और इच्छा का सम्मान नहीं करता। दुलारी से नन्हकू सिंह का जिक्र (गुणगान) सुनकर पन्ना अन्यमनस्क हो जाती है और राजा बलवंत सिंह द्वारा बलपूर्वक महरानी बनाए जाने के पहले की एक 'संभावना' को सोचने लगती है कि- 'काश ब्याह नन्हकू सिंह से हो जाता'। उस संभावना' की कसक महारानी पन्ना को छुड़ाने शिवालय घाट पर पहुँचा, तब 'एक क्षण' के लिये चारों आँखें मिलीं, जिनमें जन्म-जन्म का विश्वास ज्योति की तरह जल रहा था। 'एक क्षण' की यह कौंध उस समूचे

अध्याय
10

अभिशप्त (यशपाल)

अमीनुद्दौला पार्क में ही प्रदर्शनी मेला या जलमा कुछ न कुछ होता ही रहता है। मेले ठेले के धक्के से परेशान हुए बिना तमाशे की सैर करनी हो तो किनारे के किसी दुमंज़िले मकान के बरामदे से हो सकती है। इस विचार से इन आड़ा में संध्या भोजन के बाद मुँह में पान या शुक्लाजी के बच्चों के लिये जेब में लमनडाप ले छड़ी घुमता हुआ मैं प्रायः शुक्ला जी के बरामदे में आ बैठता।

शुक्लाजी स्वयं जैसे बैठकबाज़ और हसीड़ है उनकी श्रीमती जी भी वैसी ही मिलनसार है। दिनभर कारोबार की चख-चख के बाद संध्या समय घंटे दो घंटे समय और सुसंस्कृत लोगों के साथ बैठ बातचीत कर लेने से एक संतोष सा हो जाता है।

शुक्ला जी के दोनों बच्चे लल्लू और सविता भरे कदमों की आहट जीने से भांप जाते हैं। उन्होंने आँगन में ही घर लिया। जेब खाली करते हुए पुकारा- शुक्लाजी!

आँगन के सामने वाले कमरे के परली ओर बरामदे से झाँक मिसेज़ शुक्ला ने उत्तर दिया- आइये न, किसे पुकार रहे हैं जैसे बिलकुल अपरिचित हो।

बिजली की हजारों बत्तियाँ के प्रकाश में नीचे पार्क में प्रदर्शनी का मेला खूब भर रहा था। भीड़ अधिक थी। प्रसंग छेड़ने के अभिप्राय से मुस्कराहट मैंने पूछा- इतनी भीड़ क्या आज फिर जालौन और फतेहपुर में आतिशबाजी का मुकाबला है?

बात रखने के लिये मुस्कराहट में सहयोग दे मिसेज़ शुक्ला ने कहा- कुछ होगा ही लोगों की जेब के पैसे खींचने के लिये कुछ न कुछ बहाना चाहिये।

अपने अभ्यास के विरुद्ध उच्च स्वर में हंसकर शुक्लाजी ने कुछ न कहा। वह किरमिच की आराम कुर्सी पर पाँव फलाये बैठे रहे। दाँए हाथ की उगलियों में ठोढ़ी को टिकाये पीठ पीछे का पटिया पर सिर धरे वह गंभीर मुद्रा से जगमगाते प्रकाश में बावली हो रही भीड़ की ओर देखते रहे। दृष्टि दूसरी ओर रहने पर भी मेरे कुर्सी पर बैठ जाने की प्रतीक्षा में थे।

क्या जमाना आ गया चप्पल पर रखे अपने पांव हिलाते हुए वह बोले। शुक्लाजी की इस भूमिका में सहयोग देने के लिये श्रीमती जी के चेहरे पर से मेरे स्वागत के लिये क्षण भर को आयी मुस्कराहट विलीन हो गई- अरे जाने क्या होने वाला है दुनिया में एक गहरी सांस खींच उन्होंने गर्दन घुमा ली।

इस प्रस्ताव से घर में गंभीरता और उत्सुकता का वातावरण तैयार हो जाने पर धीमे-धीमे शुक्लाजी ने आरंभ किया- भाई इन समयों में जो न हो जाय वहीं थोड़ा है। हाँ यह जो गूंगै नवाब का अहाता है जहाँ बमपुलिस बनी है वहीं उसके साथ खसी हुई सी कोठरिया हैं। वहाँ पिछली रात खून हो गया। खून किया किसने? पांच साल के बच्चे ने। - कुर्सी पर लेटे से वह उठ बैठे। यह अत्यंत विस्मयजनक समाचार सुनाने के प्रत्यन में उनकी आंख स्वयं विस्मय से फैल गई क्या विश्वास कर सकोंगे?

पांच बरस के बच्चे ने खून तो क्या किया होगा मैंने विस्मय में सहयोग दिया कोई दुर्घटना बेचारे से हो गई होगी। लड़के छत पर खेल रहे होंगे। यह पतंगबाज़ी धक्का दे दिया हो?

समर्थन की आशा से मैंने श्रीमती शुक्ला की ओर देखा। उनके मुख पर विवाद की छाया गहरी हो गई थी। कुर्सी की पीठ पर रखे अपने हाथ पर गाल टिका उन्होंने एक और दीर्घ विश्वास लिया।

उत्तेजना में शुक्ला जी कुछ आगे झुक आये- क्या कह रहे हो? - दोनों हाथ के पंजों को बाँध संकेत से वे बोले खून ! गला घोंटकर खून। पांच बरस के बच्चे ने।

आश्चर्य से फैली मेरी आँखों ने पूछा- कैसे?

दीवार की ओर जा सबसे पीछे कोठरी है। वहीं एक झल्लीवाला रहता है। जो जात का अहीर है। उसके एक पांच बरस का लड़का और तीन बरस की लड़की थी। झल्ली ढोने वाला क्या कमा लेगा? कभी चार-छ कभी दो ही आने। अरे अमीनाबाद फतेहगंज से बोझ उठाकर आप आधा मील या मील भर ले जाइयेगा दो चार इद छ पैसे दे दीजियेगा? उसकी अहरिन मीलो दूर फतेहगंज में दाल दलने चली जातीं थी, दो-तीन आने या अधिक अनाज ले आती। किसी तरह दोनों बच्चों

अध्याय
11

चीफ की दावत (भीष्म साहनी)

11.1 प्रस्तावना

प्रगतिशील कहानीकार के रूप में भीष्म साहनी सर्वपरिचित व्यक्तित्व है। इनके 'तमस' उपन्यास पर बने टी.वी. सिरियल ने लगभग एक वर्ष तक लोगों को बांध कर रखा था। भारत-पाकिस्तान के विभाजन से उत्पन्न भयंकर विभीषिका का इसमें यथार्थपूर्ण चित्रण किवया गया है। विभाजन से टूटते परिवार छूटता परिवेश और दर-दर की ठोकरे खाने को विवश स्त्री-पुरुष, बच्चे-बुढ़ों की जीवन त्रासदी का अंकन भीष्म साहनी ने इस उपन्यास में किया है। इनके प्रकाशित कहानी संग्रह 'पटारियाँ', 'बा', 'भाग्यरेखा', 'पहला पाठ' तथा 'भटकती राख' हैं, जिनकी प्रमुख कहानियाँ 'अमृतसर आ गया', 'कटघरे', 'चीफ की दावत', 'दहलीज' 'पटरियाँ', 'सिर का सदका', सफर आदि है। इनकी कहानियों में वर्गगत भेदभाव, आर्थिक जटिलताओं के साथ-साथ चरित्रों की कुण्ठित मन:स्थिति, अंतर्विरोध और जीवन के कटु अनुभवों की अभिव्यक्ति हुई है। इनकी कहानियों का एक निश्चित उद्देश्य रहता है और वह है, मनुष्य का विषमता के विरोध में किये जा रहे संघर्ष का यथातथ्य वर्णन करना। भीष्म साहनी की 'चीफ की दावत' कहानी में मध्यवर्गीय समाज उसके परिवेश और मानसिकता को वास्त्रविकता के साथ अभिव्यक्त किया है। इसी अभिव्यक्ति में इनकी कहानियों मे वैयक्तिक चेतना का किंचित पुट लक्षित होता है। इस वर्ग की कुण्ठाओं, घुटन, बिखराव को यथार्थ के धरातल पर रेखांकित किया है। खोखली मर्यादाओं, बाह्य आडंबरों और आरोपित नैतिकता के प्रति भीष्म साहनी ने व्यंग्यपूर्ण दृष्टिकोण अपनाया है।

11.2 मध्यवर्गीय अवसरवादिता और मानवीय मूल्यों का विघटन

भीष्म साहनी की कहानी 'चीफ की दावत' का मुख्य उद्देश्य मध्यम वर्गीय व्यक्ति की अवसरवादिता, उसकी महत्वाकांक्षा में पारिवारिक रिश्ते के विघटन को उजागर करना है। मध्यवर्ग के व्यक्ति की यह सामान्य विशेषता है कि वह उच्च वर्ग में शामिल होने के अवसरों की तलाश में रहता है, चाहे वह स्वयं निम्नवर्ग से मध्यवर्ग में पहुँचा हो। औद्योगीकरण के विकास के साथ भारत में मध्यवर्ग का तेजी से विकास हुआ। शिक्षा प्राप्त कर अच्छी नौकरी पाकर या आजीविका का अनय साधन पाकर निम्नवर्ग का व्यक्ति मध्यवर्ग में पहुँच कर उच्चवर्ग की संस्तुति के लिये उच्चवर्ग के मुँह की ओर ताकने लगा।

इस कहानी का नायक श्यामनाथ दफ्तर की नौकरी पाकर उच्च पद पाने की महत्वाकांक्षा रखने लगा और उस की पूर्ति के लिये अपने दफ्तर के विदेशी चीफ की खुशामद में लग गया। चीफ की दावत का प्रबंध अपने घर में करके वह अपनी बूढ़ी माँ की अपेक्षा करता है। महत्वकांक्षा की पूर्ति के लिये माँ के साथ उस का खून का रिश्ता भी गौण हो जाता है।

आधुनिक परिवारों में बूढों की किस प्रकार उपेक्षा होती है और उन की क्या दुर्दशा होती है, यह दिखाना भ्झी इस कहानी का उद्देश्य है।

आधुनिक दिखने की चाह में मध्यवर्गीय व्यक्ति प्रदर्शन प्रिय हो गया और बूढ़ी माँ चीफ की दावत के समय प्रदर्शन योग्य वस्तु नहीं, बल्कि कूड़े की तरह छिपाने की वस्तु हो गई है। इस झूठी प्रदर्शन प्रियता और छद्म आधुनिकता की कलात्मक व्यंजना इस कहानी में हुई है।

समग्रत: 'चीफ की दावत' पारिवारिक जीवन मूल्यों के विघटन को स्पष्ट करने के उद्देश्य को लेकर लिखी गई कहानी है। लेकिन माँ की ममता और उसके महत्त्व की स्थापना के माध्यम से लेखक ने माँ के रूप तथा स्वस्थ पुरानी परंपरा को वरेण्य सिद्ध किया है। श्यामनाथ जिस माँ को उपेक्षित होने लायक वस्तु मान रहे है, उसी के माध्यम से उसकी पदोन्नति होती है।

चीफ की दावत कहानी के घटनाक्रम के विकास के आधार पर इसे दो भागों में बाँट कर विश्लेषित किया जा सकता है। यह कृत्रिम विभाजन है, पर अध्ययन की सुविधा के लिये यह विभाजन किया गया है।

अध्याय
12

वापसी (उषा प्रियवंदा)

12.1 कथावस्तु

किसी भी कहानी की कथावस्तु को समझने के लिये यह समझना जरूरी है कि कहानी की रचना किस लिये की थी। इस कहानी के माध्यम से रचनाकार क्या कहना चाहता है और जो कहना चाहता है उसे कहने के लिये उसने कथानक को किस तरह विकसित किया है। इस दृष्टि से विचार करने पर 'वापसी' कहानी के केंद्रीय भाव को समझना होगा।

उषा प्रियंवदा की 'वापसी' एक सेवानिवृत्त रेलवे कार्मिक गजाधर बाबू की कहानी है। कहानी में इस बात का उल्लेख नहीं है कि गजाधर बाबू रेलवे में किस पद पर थे और किस तरह का काम करते थे। लेकिन कहानी में बताय गया है कि उनकी पोस्टिंग आमतौर पर छोटे स्टेशनों पर होती थी, इससे ऐसा प्रतीत होता है कि वे स्टेशन मास्टर पद पर कार्य करते होंगे। स्टेशन गजाधर बाबू रेल विभाग में पैंतीस साल तक नौकरी करने के बाद अपने घर लौट रहे हैं। उनकी नौकरी इस तरह की है कि उन्हें रेलवे के छोटे-छोटे स्टेशनों पर रहना पड़ता है। उन छोटी जगहों पर वे अपने बच्चों की पढ़ाई का उचित प्रबंध नहीं कर सकते थे और न ही वे अपनी पत्नी और बच्चों को अन्य सुविधाएँ प्रदान कर सकते थे। यही सोचकर उन्होंने शहर में एक मकान बनवा लिया था जहाँ उनकी पत्नी अपने बच्चों के साथ रहती थी। गजाधर बाबू के कुल चार बच्चे थे। दो बेटे, दो बेटियाँ। एक बेटी उसी मकान में अपनी माँ, पत्नी और छोटी भाई और बहन के साथ रह रहा था। छोटे भाई-बहन अभी पढ़ रहे थे। गजाधर बाबू लौटकर इसी अपने घर-परिवार में आते हैं। उनमें घर लौटने की खुशी है। अपनी पत्नी का साथ दुबारा पाने की इच्छा है जिनके साथ बिताये कई सुखद अनुभव यादों में बसे हैं। पत्नी की सुंदर और स्नेह भरी छवि उनकी स्मृतियों में बनी हुई है। लंबे काल तक अपनी पत्नी और बच्चों से अलग और अकेले रहने से उन्हें मुक्ति मिलने वाली है, इस बात ने उन्हें खुशी से भर दिया है। हालाँकि उनके मन में इस बात का विषाद भी है कि इतने सालों जिस संसार में रहे हैं वह उनका अपना घर-संसार है। गजाधर बाबू के उस समय की मानसिकता को कहानीकार इन शब्दों में व्यक्त करता है, गंगाधर बाबू खुश थे, बहुत खुश। पैंतीस साल की नौकरी के बाद वह रिटायर होकर जा रहे थे। इन वर्षों में अधिकांश समय उन्होंने अकेले रहकर काटा था। उन अकेले क्षणों में उन्होंने इसी समय की कल्पना की थी, जब वह अपने परिवार के साथ रह सकेंगे। कहानी का केंद्रीय मुद्दा यह है कि घर पहुँचने पर क्या उन्हें वहीं संसार मिलता है जो उनकी यादों में बसा था और जिसके मिलने की उन्होंने उम्मीद की थी।

गजाधर बाबू को वह दुनिया नहीं मिलती जिसकी उन्होंने की थी। जल्दी ही उन्हें एहसास हो जाता है कि वे अपने ही घर में बिन बुलाए मेहमान की तरह है। उनके आने से जैसे घर की बनी बनायी व्यवस्था में व्यवधान पैदा हो गया है। कहानी में कुछ ऐसे प्रसंगों का उल्लेख हैं जो उन्हें धीरे-धीरे अपने घर वालों से दूर ले जाती है। यहाँ तक कि उन्हें लगता है कि उनकी पत्नी भी अब उनके करीब नहीं रह गयी है। वे हर घटना के बाद घर से दूर छोटे स्टेशनों पर बितायी अपनी जिंदगी को याद करने लगते। कहानी की शुरुआत में ही वर्णित एक घटना के उल्लेख में इसे समझा जा सकता है।

लौटने के बाद पहली बार गजाधर बाबू अपने बच्चों के बीच जाते हैं जो उनकी अनुपस्थिति में चाय पीते हुए हंसी-मजाक कर रहे होते हैं। लेकिन उनको देखकर सब चुप हो जाते हैं। बहू अपने सिर पर पल्ला रखकर चली जाती है। बेटा चाय का आखिरी घूँट भरकर वहाँ से खिसक जाता है। बेटी बसंती पिता के लिये चुपचाप कप में चाय उंडलेती है और कप उनके हाथ में पकड़ा देती है। पिता चाय का घूँट लेते हैं और कहते हैं, बिट्टी चाय तो फीकी है। ये छोटी सी घटना इस बात को बताती है कि पिता की पंसद-नापसंद के बारे में बच्चों को कोई जानकारी नहीं है। इस बीच पत्नी वहाँ आती है। लेकिन वह अपना ही दुखड़ा रोने लगती है। गजाधर बाबू चाय और नाश्ते का इंतजार करने लगते हैं। उन्हें ऐसा लगने लगता है कि उनकी मौजूदगी ने घर में कोई उत्साह पैदा नहीं किया है। ऐसे समय उन्हें रेलवे स्टेशन के अपने नौकर गनेशी की याद आती है: 'रोज सुबह पैसेंजर आने से पहले वह गर्मा-गर्म पूरियाँ और जलेबी बनाता था। गजाधर बाबू जब तक उठकर तैयार होते, उनके लिये जलेबियाँ और चाय लाकर रख देता था। चाय भी कितनी बढ़िया, काँच के गिलास में ऊपर तक भरी लबालब,

अध्याय
13

पिता (ज्ञान रंजन)

13.1 प्रस्तावना

'पिता' ज्ञानरंजन की महत्त्वपूर्ण कहानियों में से एक है। इस कहानी में रुढ़ियों से चिपके पिता के जिद्दी रूप को रेखांकित किया गया है। संयुक्त परिवार के टूटते चले जाने और युवाओं का शहरों की ओर रुख करने से बूढ़ों की अपनी समस्याएँ बढ़ी हैं। इस असहाय अवस्था में वे अकेले पड़ते जा रहे हैं। उनकी देखरेख करने वाला कोई नहीं रह गया है। ये लोग अक्सर गाँव में ही रह जाते हैं। 'पिता' में कहानीकार का उद्देश्य इस चिरपरिचित समस्या को रेखांकित करना नहीं है बल्कि पुरानी पीढ़ी की रूढ़िवादिता को उद्घाटित करना इस कहानी का मुख्य उद्देश्य है। यहाँ पिता संयुक्त परिवार के एम सम्मानित सदस्य है। परिवार उन्हें छोड़कर कहीं नहीं जाता। वह तो उनके इर्द-गिर्द सुविधाएँ जुटाने का प्रयास करता है। लेकिन पिता इन प्रयासों के प्रति कोई रुचि प्रदर्शित नहीं करते।

'पिता में पारिवारिक संबंधों के एक नए आयाम को उजागर करने की कोशिश दिखाई देती है। जो दूसरी कहानियों से इसे अलग करती हैं। यहाँ पिता अपनी रुढ़ियों व संस्कारों से चिपके हुए हैं। आवश्यक सुविधाओं को भी वे फालतू खर्च समझ बैठते हैं। परिवारजनों के बार-बार आग्रह करने पर भी वे उन सुविधाओं का उपयोग नहीं करते। जबकि घर के लोग आवश्यक सुविधाएँ मुहैया कराने के लिये हमेशा तैयार रहते हैं।

आज जब संयुक्त परिवार के लगातार टूटने से बूढ़ों की स्थिति काफी दयनीय हो गई है, उन्हें प्राय: अकेलेपन में जीवन के आखिरी दिन बिताने पड़ते हैं तब ऐसे में अब भी संयुक्त परिवारों का अस्तित्व बना हुआ है और यहाँ बूढ़े संयुक्त परिवार के साथ रहते हुए भी नहीं रहते। यानी अपनी जिद और पुरानी मान्यताओं और विश्वासों से वे इस हद तक चिपके होते हैं कि किसी प्रकार का नयापन वे स्वीकार नहीं कर पाते।

'पिता कहानी के पिता असहाय नहीं है। वे परिस्थितियों के अनुरूप खुद को ढाल लेते हैं। वे स्वाभिमानी हैं। किसी का एहसान नहीं लेना चाहते, यहाँ तक कि अपने बेटों का भी नहीं। बहन की पढ़ाई में भाई द्वारा खर्च किये गए रुपयों का हिसाब रखते हैं और एक दिन उस भाई को उतने रुपयों की एक पासबुक थमा देते हैं। उन्हें शक है कि कहीं भविष्य में उनका बेटा अपनी बहिन को यह अहसास न होने दे कि उसी की बदौलत उस बहन ने अपनी पढ़ाई पूरी की। तब शायद उसे अत्यंत मार्मिक पीड़ा से गुजरना पड़ेगा और वह अपने पिता को माफ नहीं कर पाएगी। इस दृष्टि से पिता का यह कदम दूरदर्शितापूर्ण लगता है। पिता को व्यावहारिकता का पूरा-पूरा ज्ञान है। पिता के इस कदम को भले ही अटपटा मान लिया जाए पर यह हमारे सामाजिक जीवन की एक सच्चाई है। और कोई भी स्वाभिमानी पिता अपनी किसी संतान पर दूसरों का एहसान बर्दाश्त नहीं करता। पुरानी पीढ़ी के लोगों में इस तरह की प्रवृत्ति देखने को मिलती है। 'पिता' कहानी परिवार के इन्हीं बिंदुओं को सहज ढंग से अभिव्यक्त करती है।

ज्ञान रंजजन सातवें दशक के एक महत्त्वपूर्ण कहानीकार हैं। आधुनिक हिन्दी कहानी को जीवन का मुहावरा देने वाले लेखकों में ज्ञानरंजन ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इनकी कहानियों में आज के जीवन को पहचानने और विसंगतियों को रेखांकित करने की क्षमता है। ज्ञानरंजन कहानी को दर्द की आवृत्ति-पुनरावृत्ति ही नहीं, निर्माण के लिये दी जाती हुई आहुति मानते हैं उनकी रचनाओं में सामाजिक सोद्देश्यता का पूर्ण निर्वाह दिखाई देत है। ज्ञानरंजन की कहानियों में परिवेश के बीच आम आदमी की जिंदगी तथा उसकी उलझनों में जिजीविषा की प्रवृत्ति देखने को मिलती है। आधुनिक जीवन के संदर्भ में पुराने नए मूल्यों तथा पीढ़ियों के संघर्ष, संयुक्त परिवार का विघटन, टूटता हुआ दाम्पत्य जीवन, सेक्स को लेकर नैतिकता-अनैतिकता का द्वंद्व वर्तमान जिंदगी में आए अजनबीपन, घुटन, पीड़ा संत्रास एवं व्यर्थताबोध को सहज ढंग से अभिव्यकित मिली है। स्वातंत्र्योत्तर भारत में राष्ट्र समाज परिवार, घर व्यक्ति और व्यक्तित्व की टूटन-घुटन, विरसता, अविश्वास-ज्ञानरंजन की कहानियों में चुनौती बनकर उभरा है। इसके पहले कि हम ज्ञानरंजन और उनकी कहानी 'पिता' के बारे में विवेचनात्मक अध्ययन प्रस्तुत करें, नयी कहानी और सातवें दशक की कहानी के विषय में जान लेना उपयुक्त होगा।

अध्याय
14

यह अंत नहीं (ओमप्रकाश वाल्मिकी)

14.1 कथासार

एक मेहनतकश मज़दूर दलित परिवार के जीवन में एक दिन अचानक ऐसी घटना घटी कि सारा परिवार भूचाल के धक्के से जैसे दरक गया। मंगलू और सरबती की बेटी बिरमा के संघर्ष को यह कहानी उजागर करती है। मजूदरी करके पेट पालने वाले दलित परिवार की हमेशा यह इच्छा रहती है कि उनके बच्चे पढ़ लिखकर अच्छा जीवन जीने के योग्य बने। यही सोचकर अभाव में दिन काटने वाले मंगलू ने किसन को शहर में कॉलेज की पढ़ाई के लिये भेजा था। बेटी की पढ़ाई को माँ-बाप ने जरूरी नहीं समझा और बिरमा पढ़ाई से वंचित रही। घर के और बाहर के काम में वह माँ-बाप का बराबर हाथ बँटाती है। मेहनत मजदूरी करने वह भी उनके साथ खेतों में जाती। धान की कटाई के दिनों में वह अक्सर खेतों पर काम करती। उस रोज भी वह धान काटने तेजभान के खेत में गई थी। शाम होते-होते काम के बदले में मिले धान के गट्ठर को उठाकर वह घर की ओर चल पड़ी थी। माँ ने उसे आगे इसीलिये भेजा था कि उन्हें और देर हो सकती थी और घर जाकर शाम की रोटी भी बनानी थी।

मंगलू ने कहा, 'तू घर जा। सांझ हो रही है..... घर जाके रोट्टी-पाणी देख लियो.... हमें आणै में देर हो जागी। बुग्गी में धान लादके ही आणा होगा। तू चल।'

कच्चे रास्ते से सर पर धान का गठ्ठर उठाए बिरमा घर की ओर चली जा रही थी। तभी उसने सचिन्दर को बगीचे में खड़े होकर उसे ही घूरते हुए देखा। वह घबराई जरूर, लेकिन हिम्मद करके जल्दी-जल्दी कदम उठाने की कोशिश करती रही। सचीन्दर उसके पीछे-पीछे आ रहा था। अचानक उसने सामने आकर उसका रास्ता रोक लिया। बेहयायी से बोला, 'सिर पर इतना बोझ है, थक गई होगी। थोड़ा सा सुस्ता ले....' यह कहते हुए उसने बेशरमी से बिरमा के गालों को छुआ और वह उसके सीने की ओर हाथ बढ़ा रहा था। 'बिरमा ने पीछे हटने की कोशिश की, संतुलन बिगड़ा लेकिन बिरमा ने सिर पर रखा गठ्ठर सचीन्दर के ऊपर गिरा दिया। अचानक हुए इस हमले से वब गड़बड़ा गया और गिर पड़ा। जेसे ही उसने उठने की कोशिश की बिरमा ने पूरी ताकत से उसकी जांघों के बीच वार किया। लात का प्रहार इतना तगड़ा था कि हुआ। किसी तरह लड़खड़ाकर खेत में घुसकर गुम हो गया।'

'बिरमा कुछ देर उसी क्रोधित मुद्रा में खड़ी रही। गुस्से में उसका शरीर कांप रहा था। घर लौटकर बिरमा सहज नहीं हो पाई थी। माँ के आते ही अब तक का रोका हुआ आँसुओं का बाँध फट पड़ा। माँ को सारी घटना बताइ, तो माँ काँप गई। उसे ढाढ़स बंधा कर ओर चुप रहने की सलाह देकर सरबती ने सारी बातें मंगलू को बताई। 'मंगलू के पांव-तले की जमीन खिसक गई। उसने एक गहरी सांस खींचीं रात के गहरे अंधेरे में अपनी पीड़ा को घोलने की चेष्टा करने लगा।' कुछ देर की खामोशी के बाद उसने सरबती से कहा, 'बिरमा को ठीक से समझा देना। किसन से कोई जिक्र ना करें।' माँ-बाप के इस फैसले से बिरमा नाराज थी। वह अपने हुए अपमान को सह नहीं सकती थी क्योंकि यह एक दलित स्त्री के सम्मान का प्रश्न था। अनपढ़ होते हुए भी बिरमा को अपने भाई किसन और उसके कॉलेज के साथियों की बातचीत सुनकर शोषण को न झेलने की सीख और प्रतिरोध की ताकत मिलती है। और वह सचीन्दर से अपने अपमान का बदला लेने के लिये पंचायत से न्याय की अपील करती है। दलितों की नयी पीढ़ी पढ़ लिखकर सवर्णों के अत्याचारों के विरोध में खड़े होकर अपनी बिरादरी की स्त्री की अस्मिता बचाने के लिये संघर्ष को तैयार है। किसन ने सारी घटना को सुनते ही अपने मन में ठान लिया कि लोकतांत्रिक प्रक्रिया की महत्त्वपूर्ण संस्था पंचायत के द्वारा, यह बिरमा के ऊपर हुए अन्याय के खिलाफ न्याय मांगेगा। पुरानी पीढ़ी अशिक्षा के कारण आत्मसम्मान, स्वाभिमान, संघर्ष, संगठन जैसे जीवन को बदलने वाले संदर्भों को समझने से अछूती ही रही। इसलिये यह नई पीढ़ी को पंचायत में जाने से रोकना चाहती है। कहानी में पंचायती राज की लोकतांत्रिक प्रक्रिया के जातिवादी चरित्र पर प्रकाश डाला गया है। दलितों की नई पीढ़ी में अन्याय-अत्याचार के खिलाफ

अध्याय
15

उसने कहा था (चंद्रधर शर्मा गुलेरी)

15.1 कथावस्तु

'उसने कहा था' प्रथम विश्वयुद्ध की पृष्ठभूमि में लिखी गई कहानी है। गुलेरी जी ने लहनसिंह और सूबेदारनी के माध्यम से मानवीय संबधों का नया रूप प्रस्तुत किया है। आइये सबसे पहले कहानी में वर्णित घटनाओं का विश्लेषण करें।

कथा का आरंभ

'उसने कहा था' कहानी का आरंभ अमृतसर के एक बाजार से होता है। समय हैं 19वीं शताब्दी का अंतिम दशक, संभवत: 1890 के आसपास। 12 वर्षीय लड़का और 8 वर्षीय लड़की की मुलाकात होती है। दोनों सिख हैं। लड़का लड़की से पूछता है- "तेरी कुड़माई हो गई"। लड़की 'धत्' कहती है और भाग जाती है। दोनों बालकों में थोड़ा परिचय भी हो जाता है। मिलने का यह सिलसिला लगभग एक माह तक चलता रहता है। लड़का हर बार उसी तरह पूछता है, 'तेरी कुड़माई हो गई', लड़की जवाब देती है।। 'धत्'। इस पूछने और बताने में ही उनके बीच एक अनकहा मधुर संबंध आकार लेने लगता है, जिसे अपनी अल्पवय के कारण दोनों ही नहीं जान पाते। एक दिन इसी तरह मिलने पर जब लड़का कुड़माई के बारे में पूछता है तो लड़की विश्वासपूर्वक जवाब देती है कि 'हाँ, हो गई।' लड़के को लड़की के इस उत्तर से आघात लगता है। वह इसे ठीक-ठीक समझ नहीं पाता लेकिन उनकी मनोदशा बदल जाती है और वह गुस्से में अपने रास्ते में आने वालों से जबरदस्ती झगड़ पड़ता है।

कहानी का पहला भाग यही समाप्त हो जाता है। यहाँ तक कहानीकार दो किशोरवय की ओर बढ़ते बच्चों के स्नेह संबंध का चित्र प्रस्तुत करता है। कहानीकार कहानी के इस अंश को यहीं छोड़ देता है।

कहानी का दूसरा भाग इस घटना के लगभग पच्चीस वर्ष बाद की घटनाओं से संबंधित है। प्रथम विश्वयुद्ध का काल। फ्रांस में भारतीय सैनिक इंग्लैंड की ओर से जर्मनी के विरुद्ध लड़ने के लिये तैनात किये गए हैं। इनमें लहनासिंह भी है। आगे की घटनाओं से मालू पड़ता है। कि लहनासिंह वहीं है जो पहले भाग में बालक के रूप में मौजूद था। लेकिन कहानीकार इस बात का खुलासा जल्दी नहीं करता वरन् दूसरे भाग से कहानी बिल्कुल नये धरातल पर आगे बढ़ती है।

युद्ध के मोर्चे पर डटे सिपाही खंदक में पड़े-पड़े उकता गए हैं। इनमें सूबेदार हजारासिंह हैं, उनका बेटा बोधासिंह है, लहनासिंह है। इसके अलावा भी कई सिपाही हैं। लहनासिंह चाहता है कि इस तरह पड़े रहने से अच्छा है, जल्दी से जल्दी लड़ाई शुरू हो, चाहे इसके लिये हमें स्वयं ही जर्मन फौज पर हमला क्यों न करना पड़े। लहनासिंह का यह उतावलापन जहाँ उसके साहस को दिखाता है; वहीं उकताहट की स्थिति को भी बताता है। हजारासिंह का बेटा बोधासिंह बीमार है। लहनासिंह उसका काफी ध्यान रखता है और उसकी देखभाल करता है।

यहाँ हमें अभी मालूम नहीं है कि लहनासिंह उसका इतना ध्यान क्यों रखता है। सिपाहियों की आपसी बातचीत से हमें यह मालूम पड़ता है कि ये सिपाही जो मूलत: किसान परिवार के हैं, इनके सपने भी किसानी जीवन से जुड़े हैं। लहनासिंह की आकांक्षा है कि युद्ध खत्म होने के बाद वह अपने आम के बगीचे में अपने भतीजे कीरतसिंह के साथ सुख-चैन से रहे।

कथा का विकास

सैनिकों की इस आपसी बातचीत के साथ कहानी का दूसरा भाग खत्म हो जाता है। तीसरे भाग में कहानी फिर एक नया मोड़ लेती है। यहाँ हम देख सकते हैं कि पहले दो भाग केवल कहानी की पृष्ठभूमि और उसके पात्रों के परिचय से संबंधित हैं। तीसरे भाग में कथावस्तु का विकास होता है। यहाँ लपटन साबह नाम के एक नये पात्र का प्रवेश होता है जो हजारासिंह को आदेश देता है कि वह एक मील आगे पचास जर्मन सैनिकों की टुकड़ी पर धावा बोले और इसके लिये वह

डी.एल.पी. बुकलेट्स की विशेषताएँ

- आयोग के नवीनतम पैटर्न पर आधारित अध्ययन सामग्री।
- पैराग्राफ, बुलेट फॉर्म, सारणी तथा फ्लोचार्ट का उपयुक्त समावेश।
- विषयवस्तु की सरलता, प्रामाणिकता तथा परीक्षा की दृष्टि से उपयोगिता पर विशेष ध्यान।
- प्रत्येक अध्याय के अंत में विगत वर्षों में पूछे गए एवं संभावित प्रश्नों का समावेश।

Website : www.drishtiIAS.com
E-mail : online@groupdrishti.com

DrishtiIAS

YouTube Drishti IAS

drishtiias

drishtithevisionfoundation